शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-2 (April-June) 2026
Page No- 135-139
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :
डॉ. गुलाब सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग,
राम सकल सिंह साइंस कालेज, डुमरा,
सीतामढ़ी, बिहार.

Corresponding Author :
डॉ. गुलाब सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग,
राम सकल सिंह साइंस कालेज, डुमरा,
सीतामढ़ी, बिहार.

पुरुष–प्रकृति सम्बन्ध और कैवल्य : 'सांख्यकारिका' के आलोक में मुक्ति-मार्ग का विवेचनात्मक अध्ययन

शोधसार : प्रस्तुत शोध-पत्र 'सांख्यकारिका' के आलोक में पुरुष–प्रकृति सम्बन्ध की दार्शनिक संरचना और कैवल्य की संकल्पना का विवेचन करता है। 'सांख्य' का मूल प्रतिपादन यह है कि चेतन पुरुष अनेक, शुद्ध, निरपेक्ष, द्रष्टा (साक्षी) है, जबकि प्रकृति त्रिगुणात्मक, जड़ और परिवर्तनशील है। बन्धन का कारण दोनों का अविवेकी संयोग है और मुक्ति का उपाय विवेकज्ञान अथवा पुरुष-प्रकृति की नितान्त भिन्नता की अनुभूति है (ईश्वरकृष्ण, 2017; वाचस्पति मिश्र, 1976)। शोध में 'सांख्यकारिका' की उन कारिकाओं (विशेषतः 55–68) का सूक्ष्मा-वलोकन किया गया है जिनमें लिङ्ग-शरीर, संस्कार-वात (धृत-शरीर), धर्म-अधर्म-वैराग्य-ऐश्वर्य का मूल्यांकन, तथा "प्रकृति-वियोग" के द्वारा प्राप्त कैवल्य का विवेचन है। गौड़पाद-भाष्य, युक्तिदीपिका और तत्त्वकौमुदी जैसी परम्परागत टीकाओं तथा आधुनिक हिन्दी अनुसंधान/पाठ्य-सामग्री के समन्वित अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सांख्य का मुक्ति-मार्ग, कर्म-प्रधान साधना से अधिक ज्ञानकेन्द्रित विवेक-साधना है। ज्ञानोत्पत्ति के पश्चात् संस्कार-गति से देहधारण बना रहता है, पर अन्ततः पुरुष का "केवलत्व" सिद्ध होता है (कारि. 62–68)। साहित्य-समीक्षा से यह भी प्रतिपादित होता है कि हिन्दी में उपलब्ध व्याख्यान सामग्रियाँ अक्सर योग-सूत्र के "सत्त्वपुरुषान्यताख्याति" की संकल्पना से संवाद करती हैं, परन्तु सांख्य की मौलिक निरिश्वरवादी सॉटेरियोलॉजी और उसके विशेष मुक्ति-विज्ञान का पृथक्-पक्ष पर्याप्त रुप से उघड़ा नहीं है। यही शोध-अन्तराल इस अध्ययन का प्रेरक रहा है। निष्कर्षतः सांख्य का कैवल्य दार्शनिक-विवेक से उपलब्ध "अन्तःकरण-स्तर की विमुक्ति" है, जो व्यवहार में वैराग्य-संयम से सुरक्षित, परन्तु वैधानिक रुप से ज्ञान-प्रधान सिद्ध होती है (ईश्वरकृष्ण, 2017; अनन्ता जर्नल, 2016)।

कूट शब्द : पुरुष; प्रकृति; कैवल्य; विवेकज्ञान; सांख्यकारिका; तत्त्वकौमुदी; त्रिगुण; लिङ्ग-शरीर; मुक्ति।

1. परिचय : भारतीय दर्शन की आस्तिक परम्परा में सांख्य सर्वाधिक प्राचीन और विशिष्ट तत्त्वमीमांसक शास्त्र माना जाता है। इसके दो

परम-तत्त्व हैं- पुरुष(चेतन, नित्य, अनेक) और प्रकृति(जड़, त्रिगुणात्मक, सर्वविकारी)। सांख्य के अनुसार जगत का विकास प्रकृति-परिणाम है तथा पुरुष सदा साक्षी-मात्र, असंग और अकर्ता रहता है। मानवीय दुःख का मूल कारण पुरुष-प्रकृति का अविवेकी संयोग(अभिसम्बन्ध) है; अतः "दुःख-त्रयाभिघात" से उदीप्त जिज्ञासा शास्त्र के प्रति पुरुषार्थ को प्रेरित करती है। यही 'सांख्यकारिका' का उद्घाटन-वाक्य भी है (ईश्वरकृष्ण, 2017)। इस परिप्रेक्ष्य में मोक्ष/कैवल्य का अर्थ है- पुरुष का स्वयं के शुद्ध चैतन्य-स्वरुप में प्रतिष्ठित होना और प्रकृति के साथ मिथ्या-आत्मत्व का अन्त। सांख्य इसे "प्रकृतिवियोग", "विवेक-ख्याति" अथवा "केवलत्व" के नाम से प्रतिपादित करता है।

सांख्य-परम्परा में कपिल, आसुरी और पञ्चशिख आदि आचार्यों का स्मरण मिलता है, पर आज जो मूल-ग्रन्थ उपलब्ध है वह ईश्वरकृष्णकृत 'सांख्यकारिका'(आर्या-छन्द, कुल 72 कारिकाएँ) है, जिस पर गौड़पाद-भाष्य, जयमङ्गला, युक्तिदीपिका तथा वाचस्पति-मिश्रकृत 'सांख्य-तत्त्व-कौमुदी' जैसी प्रख्यात टीकाएँ उपलब्ध हैं (गौड़पाद भाष्य, युक्तिदीपिका, भारतकोश; तत्त्वकौमुदी, 1976)। इन टीकाओं में सांख्य के तत्त्व-तन्त्र (25 तत्त्व), प्रमाण-मीमांसा (प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द) और मुक्ति-विज्ञान का सविस्तार प्रतिपादन प्राप्त होता है, जिसे आधुनिक हिन्दी अध्ययनों, पाठ्य-सामग्री, शोध-लेखों और शोध-प्रबन्धों ने भी ग्रहण-विस्तार दिया है (त्रिपाठी, 2015)।

समस्या-विवरण तथा शोध-अन्तराल यह है कि हिन्दी में उपलब्ध विवेचन प्रायः योग-सूत्र के निकट जाते हुए "सत्त्व-पुरुष-अन्यताख्याति" (योगसूत्र II.25) से कैवल्य को समझाते हैं, जबकि 'सांख्यकारिका' के अन्तिम प्रकरणों में वर्णित कैवल्य एक विशिष्ट ज्ञान-साध्य "प्रकृतिवियोग" है, जिसमें धर्म-अधर्म-वैराग्य-ऐश्वर्य आदि की भूमिका सहायक/उपयोगी के रुप में पुनर्मूल्यित की जाती है। ज्ञानोत्तर-अवस्था में संस्कार-वेग से देह-धारण बना रहना भी एक विशिष्ट है (कारि. प्रतिपादन 67–68) (ईश्वरकृष्ण, 2017; ऑल स्टडीज़ जर्नल, 2016)। फलतः यह अध्ययन परिकल्पना करता है कि कैवल्य की सांख्य-अवधारणा को उसके अपने टेक्स्ट-आधार पर कारिका-केन्द्रित पठन और पारम्परिक टीकाओं के आलोक में समझना आवश्यक है, ताकि आधुनिक हिन्दी दर्शनशास्त्रीय विमर्श में सांख्य की स्वायत्त मुक्ति-दृष्टि स्पष्ट हो सके।

2. पेपर-अवलोकन, दायरा एवं परिकल्पना : प्रस्तुत शोध-पत्र में,- (i) पुरुष-प्रकृति सम्बन्ध का सांख्यीय तत्त्व-परिप्रेक्ष्य, (ii) कारिका 55–68 का सैद्धान्तिक-व्याख्यात्मक विश्लेषण, (iii) कैवल्य-मार्ग में ज्ञान-वैराग्य-संस्कार के परस्पर सम्बन्ध का विवेचन, और (iv) साहित्य-समीक्षा के आधार पर हिन्दी अनुशीलन की प्रवृत्तियों का मूल्यांकन सम्मिलित है। परिकल्पना है कि कैवल्य ज्ञान-साध्य "आन्तरिक पृथक्करण" है। वह न तो मात्र कर्मफल-नाश का परिणाम है, और न ईश्वर-अनुग्रह का; वह तो विवेक-ज्ञान द्वारा पुरुष-प्रकृति के नित्य-भेद की साक्षात्कारित स्थिति है (वाचस्पति मिश्र, 1976)।

3. अनुसंधान उद्देश्य : इस अध्ययन का उद्देश्य है— (i) 'सांख्यकारिका' में पुरुष–प्रकृति-सम्बन्ध की दार्शनिक संरचना को कारिका-स्तर पर स्पष्ट करना; (ii) कारिका 55–68 के आलोक में बन्ध-निवृत्ति से कैवल्य-प्राप्ति तक के पथ (लिङ्ग-शरीर, संस्कार-वेग, धर्म-अधर्म, वैराग्य-ऐश्वर्य और विवेक-ज्ञान) की भूमिका पहचानना; (iii) गौड़पाद-भाष्य, युक्तिदीपिका और तत्त्वकौमुदी की टीकापरम्परा के साक्ष्य से यह दिखाना कि सांख्य की मुक्ति-संकल्पना मूलतः ज्ञान-प्रधान है, यद्यपि वैराग्य-संयम उसकी साधना-भूमि तैयार करते हैं पर मुक्ति का अन्तःकरण-प्रमाण विवेक-ज्ञान ही है (ईश्वरकृष्ण, 2017; वाचस्पति मिश्र, 1976; भारतकोश)।

4. सैद्धान्तिक ढाँचा तथा साहित्य-समीक्षा-

(क) तत्त्वमीमांसीय आधार— सांख्य-तत्त्वतन्त्र 25 तत्त्वों पर आधारित है: पुरुष (1) और प्रकृति (1) से आरम्भ होकर महत/बुद्धि, अहंकार, मन, 10 इन्द्रियाँ, 5 तन्मात्राएँ और 5 महाभूत (कुल 24) तथा अलग पुरुष (चैतन्य)। प्रकृति त्रिगुणात्मक (सत्त्व-रजस्-तमस), स्वतः-परिणामी और पुरुष-सन्निधि में प्रवृत्त होती है। पुरुष साक्षी-मात्र, अकर्मा, अनेकत्व-सम्पन्न है (जी.के.हिंदी; टीचमिंट नोट्स)। यह अवयव-विन्यास प्रायोगिक नियम नहीं,

दार्शनिक-विवेचना की योजना है, जो मुक्ति-साध्य विवेक-ज्ञान की पृष्ठभूमि बनता है।

(ख) प्रमाणमीमांसीय संकेत— सांख्य तीन प्रमाण स्वीकार करता है- प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। मुक्ति-विषयक सत्य का प्रमाण अन्ततः बुद्धि-परम्परा में उद्भूत विवेक-ज्ञान है; तदनुकूल 'सांख्यकारिका' में दुःख-त्रय-निवारण हेतु कारण-मीमांसा और पुरुष-प्रकृति-विवेक का निर्बन्ध प्रतिपादन है (ईश्वरकृष्ण, 2017; यूओयू, "भारतीय दर्शन" एसएलएम)।

(ग) टीकापरम्परा आधारित साक्ष्य— गौड़पाद-भाष्य 'सांख्यकारिका' पर उपलब्ध सबसे प्राचीन व्याख्याओं में माना जाता है। इसमें सूक्ष्म-शरीर, तत्त्व-विन्यास और प्रकृति-परिणाम का विवेचन है (भारतकोश, "गौड़पाद-भाष्य")। 'युक्तिदीपिका' विस्तृत टीका है, जिसके कर्त्ता और काल पर मतभेद है, परन्तु इसे चतुर्थ–सप्तम शती के मध्य के आस-पास मानने की प्रवृत्ति दिखती है। वाचस्पति-मिश्र की 'तत्त्व-कौमुदी'(हिन्दी अनुवादः रामशंकर त्रिपाठी) कारिकाओं के दार्शनिक-न्याय को सुव्यवस्थित करती है (भारतकोश, "युक्तिदीपिका"; एम.एल.बीडी, 1976)। आधुनिक हिन्दी में उपलब्ध संस्करण/व्याख्याएँ जैसे चौखम्बा/एम.एल.बीडी. कृत संस्कृत-हिन्दी पाठ शिक्षण-अध्ययन के लिये प्रामाणिक सुलभ आधार प्रस्तुत करते हैं (सीताराम शास्त्री, 2022; धुन्धिराज शास्त्री, 2008; शडंगी, 2017)।

(घ) समकालीन हिन्दी अनुसंधान— शोधगंगा में उपलब्ध शोध-प्रबन्ध सांख्य के सृष्टि-विचार और शैक्षिक-निहितार्थों पर विस्तृत सामग्री देते हैं (त्रिपाठी, 2015)। जर्नल-लेखों में "भारतीय योगदर्शन में कैवल्य-स्वरुप" तथा "सांख्य-दर्शन में पुरुष-प्रकृति चिंतन" जैसे अध्ययनों ने कैवल्य को 'सत्त्वपुरुषान्यताख्याति/प्रकृतिवियोग' के रूप में विश्लेषित किया है(ऑल स्टडीज़ जर्नल, 2016; अनंता जर्नल, 2016)। एक अन्य लेख "सांख्य दर्शन में विकासवाद" प्रकृति-पुरुष-समन्वय को सृष्टि-व्याख्या से जोड़कर देखता है (आर.आर जर्नल्स, 2020)। ये समकालीन हिन्दी स्रोत सांख्य के मुक्ति-विज्ञान को अद्यतन शैक्षिक संदर्भ देते हैं, यद्यपि कारिका-स्तरीय सूक्ष्म पाठ अभी और अपेक्षित है।

(ङ) वैकल्पिक व्याख्याएँ— विज्ञानभिक्षु के समन्वयवादी पाठ('सांख्य-प्रवचन-भाष्य' परम्परा) में ईश्वर-मान्यता के संकेत भी मिलते हैं, परन्तु शास्त्रीय सांख्य का मूल सिद्धान्त "निरिश्वर-वाद" ही प्रतीत होता है। मुक्ति का कारण विवेक-ज्ञान है, ईश्वर-अनुग्रह नहीं (चतुर्वेदी के माध्यम से उपलब्ध विवेचनात्मक पाठ)। यह वैविध्य सांख्य-विचार की इतिहासगत जीवंतता का संकेत है।

5. शोध-पद्धति : पद्धतिरुप में यह अध्ययन **ग्रन्थ-केन्द्रित विश्लेषण** और **तार्किक-दार्शनिक अनुशीलन** का समन्वय करता है। प्राथमिक पाठ 'सांख्यकारिका'(एम.एल.बीडी./चौखम्बा के संस्कृत-हिन्दी संस्करण) को आधार बनाकर, विशेषतः **कारिका 55–68** का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है, जहाँ लिङ्ग-शरीर, धर्म-अधर्म आदि का विमर्श और कैवल्य-लक्षण प्रतिपादित हैं। इसके साथ **टीकापरम्परा** गौड़पाद-भाष्य, युक्तिदीपिका और तत्त्वकौमुदी के साक्ष्यों का **आन्तरिक-समन्वयात्मक** उपयोग हुआ है, ताकि कारिका-अर्थ-परम्परा का ऐतिहासिक-विकास और सैद्धान्तिक-निरन्तरता प्रकट हो सके। सहायक स्रोत के तौर पर हिन्दी-माध्यम की शैक्षिक सामग्रियाँ (यू.ओ.यू, एस.एल.एम) तथा समकालीन हिन्दी शोध-लेख/प्रबन्ध(ऑल स्टडीज़ जर्नल; अनंता जर्नल) का **संदर्भ-समर्थन** लिया गया है। पद्धतिगत रुप में हमने (i) अवधारणा-मानचित्रण (ii) तर्क-विश्लेषण, और (iii) प्रतिमान-तुलना(योग-सूत्र के कैवल्य-विषयक संकेत बनाम सांख्य-कारिका) का उपयोग किया, तथा साथ ही एमएलए-9 मानकानुसार स्रोत-संदर्भित प्रस्तुति बनाए रखी है।

6. विश्लेषण और चर्चा-

(1) पुरुष–प्रकृति सम्बन्ध का तर्क— सांख्य के अनुसार बन्धन का मूल "अविवेक" है, यानि साक्षी-स्वरुप पुरुष का बुद्धि-अहंकार-मनादि प्रकृति-विकारों से मिथ्या समीकृत हो जाना। प्रकृति स्वयं त्रिगुणात्मक, जड़ और परिणामी है तथा पुरुष नित्य-चैतन्य, निरपेक्ष एवं द्रष्टा है। "संयोग" का तात्पर्य यहाँ पर किसी प्रकार के द्रव्यात्मक मिश्रण से नहीं है, बल्कि सन्निधि-मात्र से प्रकृति-परिणाम के उद्दीपन से है। इसी कारण पुरुष वस्तुतः

कर्ता-भोक्ता नहीं है, परन्तु अविवेकवश देह-मन-इन्द्रिय के सुख-दुःख को स्वयं का मान बैठता है। 'तत्त्वकौमुदी' इस भ्रान्ति को "विवेक-ख्याति" से शमित करती है। बुद्धि-परम्परा में 'नास्मि, न मे, नाहम्' का दृढ़ और पुनरावृत्त बोध स्थिर होता है, जिससे पुरुष-प्रकृति का नित्य-भेद प्रत्यक्ष होता है (वाचस्पति मिश्र, 1976)। 'सांख्यकारिका' के अनुसार बन्ध-मोक्ष वस्तुतः प्रकृति-विकारों के हैं; पुरुष तो उसी प्रकार असंग रहता है जैसे आकाश धूम-धूलि से असंग है। अतः "न वह बंधता है, न मुक्त होता है। संसरण और निवृत्ति तो प्रकृति की हैं"— यही सन्दर्भ कारिका 62 का भाव है (ईश्वरकृष्ण, 2017)। ज्ञानमीमांसा की दृष्टि से भी सांख्य का त्रिप्रमाण-विधान (प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द) इसी विवेक-ख्याति की संस्थिति का आधार बनता है। प्रत्यक्ष/अनुमान से पुरुष-प्रकृति-भेद का स्थिरीकरण तथा आचार्य-परम्परा का शब्द-प्रमाण उसके समर्थन में कार्य करता है। फलतः पुरुष–प्रकृति सम्बन्ध का तर्कात्मक निष्कर्ष यह है कि मुक्ति का हेतु कोई बाह्य अनुग्रह नहीं, बल्कि अन्तर्बोध का परिवर्तन—**अविवेक से विवेक की ओर**—है। यही सांख्य का विशिष्ट मुक्तिशास्त्र है जो योग-सूत्र के "अन्यताख्याति"-विधान से संवाद करते हुए भी अपने निरिश्वरवादी तर्क-विन्यास पर स्वतंत्रता से टिकता है (ऑल स्टडीज जर्नल, 2016; *अनंत जर्नल*, 2016) ।

(2) लिङ्ग-शरीर और संस्कार-वात— कारिकाएँ 39–45 लिङ्ग-शरीर (सूक्ष्म-शरीर) और "भाव"-समूह की भूमिका स्पष्ट करती हैं। बुद्धि-अहंकार-मन, इन्द्रियाँ और तन्मात्राएँ मिलकर वह वहन-तन्त्र बनाते हैं, जिसके माध्यम से जीवन्मात्र अनुभव-संसार को भोगता/रचता है (ईश्वरकृष्ण, 2017)। इसी क्रम में आठ भाव— धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य, अवैराग्य, ऐश्वर्य और अनैश्वर्य— ऊर्ध्व/अधोगति के हेतु बनते हैं। संस्कार-संचय इन्हीं भावों के अनुकूल देह-युग्म का उपपादन करता रहता है। कारिका 55 में पुरुष का "दुःख-भोक्ता" प्रतीत होना इसी मिथ्याकल्पित सम्बन्ध का फल बताया गया है। परन्तु निर्णायक मोड़ 57–60 पर आता है, जिनमें प्रकृति-उपकार के रुपक— दुग्ध-उत्पादन हेतु बछड़ा, और "नर्तकी-दर्शन" दर्शाते हैं कि प्रकृति पुरुष को अपना स्वरुप दिखाकर निवृत्त हो जाती है। जैसे रंगमंच पर नर्तकी दर्शकों को रसास्वादन कराकर नृत्य से उतर आती है, वैसे ही विवेक-उद्भव पर प्रकृति स्वयमेव प्रसव-धर्मिता रोक देती है (कारि. 59–60) (ईश्वरकृष्ण, 2017)। यह रुपक-योजना केवल सौन्दर्योपमा नहीं, बल्कि मनो-दार्शनिक संकेत है। जब बुद्धि में 'अहं', 'मम' इत्यादि प्रत्ययों का निश्चयात्मक निषेध जमता है, तब मन-इन्द्रिय-वृत्तियाँ क्षीण होकर "प्रेक्षकवत्" स्थिति जन्माती हैं। पुरुष साक्षी के रूप में स्थित हो जाता है, और प्रकृति का प्रवाह "स्वार्थ-निवृत्ति" को प्राप्त होता है (वाचस्पति मिश्र, 1976)। इस चरण में लौकिक-नैतिक प्रयत्न (धर्मादि) साधन-भूमि अवश्य बनते हैं, पर वे अन्तिम मोचक नहीं होते। वे विवेक-प्राप्ति के अनुकूल मानस-संस्कार को परिष्कृत करते हैं (त्रिपाठी, 2015) ।

(3) ज्ञान, धर्म-अधर्म, वैराग्य-ऐश्वर्य का पुनर्मूल्यांकन— कारिका 63 स्पष्ट कहती है कि "प्रकृति सात रुपों- धर्म, अधर्म, वैराग्य, राग, ऐश्वर्य, अनैश्वर्य एवं अज्ञान से बांधती है और पुरुषार्थ के लिये एक रुप- **ज्ञान/विवेक** से मुक्त करती है"। यही सांख्य-मुक्ति का केन्द्रीय सूत्र है (ईश्वरकृष्ण, 2017)। तत्पश्चात् 67–68 में ज्ञानोदयोत्तर दशा का सूक्ष्म विवेचन प्राप्त होता है। ज्ञान के पश्चात् धर्म-अधर्मादि अब "मुक्ति-कारण" नहीं रहते, किन्तु "संस्कार-वात" के कारण देह-गति कुछ समय तक चलती रहती है- घटचक्रवत्, अर्थात् चक्र को गति देना रोक देने के बाद भी जड़त्ववश थोड़ी देर तक घूमता रहता है। इसी प्रकार ज्ञानी के लिये देह का अवसान होना शेष है, पर पुरुष के स्तर पर केवलत्व सिद्ध हो चुका रहता है (वाचस्पति मिश्र, 1976)। यही वह बिन्दु है जहाँ सांख्य की ज्ञान-प्रधानता, वैराग्य-संयम से भिन्नता रखते हुए भी उन्हें साधना-भूमि के रूप में पुनर्मूल्यांकित करती है। वैराग्य मनोभूमि को निर्मल करता है, पर मोक्ष का कारण 'विवेक-ख्याति' ही है। योग-सूत्र की "सत्त्वपुरुषान्यताख्याति" के साथ यहाँ सार्थक संवाद बनता है। किन्तु सांख्य में ईश्वर-अनुग्रह की अनिवार्यता नहीं मानी जाती है, मुक्ति का वैधानिक आधार **'ज्ञान'** ही है (ऑल स्टडीज जर्नल, 2016; अनंता जर्नल, 2016; भारतकोश)। इस प्रकार विश्लेषण का निष्कर्ष यह है कि पुरुष-प्रकृति विवेक से उत्पन्न ज्ञान (टेक्स्ट-आधारित और टीकापरम्परा-समर्थित) कैवल्य की अन्तःप्रक्रिया है। शेष तत्त्व (धर्म-वैराग्य-ऐश्वर्य आदि) उपयोगी एवं सहायक हैं, मगर निर्णायक नहीं (ईश्वरकृष्ण, 2017; वाचस्पति मिश्र, 1976) ।

7. परिणाम : इस अध्ययन से निम्न प्रमुख निष्पत्तियाँ उभरती हैं—

(क) कैवल्य का स्वरूप—ज्ञान-साध्य 'केवलत्व'- सांख्य-कारिका के अन्तिम प्रकरणों का निकट-पाठ बताता है कि कैवल्य प्रकृति-वियोग से प्राप्त पुरुष-स्थिति है, जहाँ पुरुष "न बध्यते, न मुच्यते" की अवस्था में रहता है। बन्ध एवं मोक्ष वस्तुतः प्रकृति-विकारों के हैं। यह 'आत्मा-केवलत्व' का सिद्धान्त योग-सूत्र के "सत्त्वपुरुष-अन्यताख्याति" से सह-अन्वय रखता है, परन्तु सांख्य में ईश्वर-अनुग्रह की अपरिहार्यता का आग्रह नहीं है; कारण विवेक-ज्ञान ही है (ईश्वरकृष्ण, 2017; भारतकोश कैवल्य; ऑल स्टडीज़ जर्नल, 2016)।

(ख) ज्ञान और संस्कार-वात का सम्बन्ध- ज्ञानोदय के बाद भी 'धृत-शरीर' संस्कारवश चलता रहता है (कारिका 67–68)। अतः जैन/बौद्ध 'निर्वाण' की भाँति देहान्त तक स्थित-प्रज्ञा-वृत्ति संभव है। यह सांख्य-मुक्ति को 'तात्त्विक-विवेक' की उपलब्धि मानता है, जिसका व्यवहारिक फल वैराग्य-संयम में प्रकट होता है। परन्तु वैधानिक मुक्ति का प्रमाण ज्ञान ही रहता है (ईश्वरकृष्ण, 2017)।

(ग) टीकापरम्परा का योगदान- गौड़पाद-भाष्य और युक्तिदीपिका कैवल्य-विचार में सूक्ष्म-शरीर, तत्त्व-विन्यास और बुद्धि-परम्परा की सूक्ष्मताओं को उभारती हैं। वाचस्पति-मिश्र 'तत्त्व-कौमुदी' में विवेक-ख्याति के ज्ञानमीमांसक सूत्रों को व्यवस्थित करते हैं। समकालीन हिन्दी सामग्री शिक्षण-हित में उक्त तत्त्वों को सुलभ करती है, किन्तु कारिकास्तरीय सूक्ष्म अध्ययन से ही सांख्य-मुक्ति का स्वायत्त चेहरा स्पष्ट बनता है (भारतकोश गौड़पाद-भाष्य, युक्तिदीपिका; वाचस्पति मिश्र, 1976; यू.ओ.यू.-एस.एल.एम.)।

8. निष्कर्ष : 'सांख्यकारिका' के आलोक में पुरुष-प्रकृति सम्बन्ध की दार्शनिक विवेचना दिखलाती है कि बन्धन, ज्ञान-दोष(अविवेक) से जनित मिथ्या-आत्मत्व है। पुरुष-प्रकृति के नित्य-भेद का प्रत्यक्ष/अनुमान/शब्द समर्थित बोध ही मुक्ति का कारण है। इस प्रकार कैवल्य, कर्म-फल-निरपेक्ष, ईश्वर-अनुग्रह से स्वतंत्र, **ज्ञान-प्रधान** मुक्ति-दृष्टि है, जहाँ वैराग्य-संयम इत्यादि साधनाभूमि को शुद्ध अवश्य करते हैं परन्तु निर्णायक मोचक तत्त्व विवेक-ज्ञान है। टीकापरम्परा (गौड़पाद-भाष्य, युक्तिदीपिका, तत्त्वकौमुदी) और समकालीन हिन्दी अनुसंधान के साथ कारिका 55–68 के सूक्ष्मावलोकन से यह विदित होता है कि ज्ञानोदय के बाद संस्कार-वात से देह-धारण बना रहना सांख्य-मुक्ति की मौलिकता है; अन्ततः पुरुष का 'केवलत्व' सिद्ध होता है। अतः दर्शनशास्त्र के अध्येताओं के लिए यह अपेक्षित है कि वे योग-सूत्र के कैवल्य-विवेचन से संवाद रखते हुए भी सांख्य के स्वायत्त टेक्स्ट-आधार पर खड़े होकर 'प्रकृतिवियोग' की कैवल्य-संकल्पना को पुनःपाठित करने का प्रयास कर सकते हैं। यही प्रस्तुत अध्ययन का केन्द्रीय योगदान माना जा सकता है।

संदर्भ सूची :

1. **ईश्वरकृष्ण.** *सांख्यकारिका: गौड़पाद-भाष्य सहित; संस्कृत पाठ एवं हिन्दी अनुवाद,* दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, 2017।
2. **ईश्वरकृष्ण.** *सांख्यकारिका: संस्कृत एवं हिन्दी अनुवाद,* सम्पा. आचार्य सीताराम शास्त्री, वाराणसी: चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, 2022।
3. **मिश्र, वाचस्पति.** *सांख्य तत्त्व कौमुदी:* हिन्दी अनुवाद, रामशंकर त्रिपाठी, 2 परिवर्धित संस्करण, मोतीलाल बनारसीदास, 1976 (प्रथम सं. 1967)।
4. **मिश्र, आद्यप्रसाद.** *सांख्य तत्त्व कौमुदी—प्रभा (हिन्दी),* वाराणसी, अक्षय वट प्रकाशन, 1956।
5. **ईश्वरकृष्ण.** *सांख्यकारिका* (हिन्दी), सम्पा. एवं टीका: धुन्धिराज शास्त्री, वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ ऑफिस, 2008।
6. **शडंगी, सुधांशु कुमार.** *सांख्यकारिका—'राज्ञी': स्पष्ट हिन्दी विवेचन सहित,* दिल्ली: भारतीय विद्या प्रकाशन,2017।
7. **त्रिपाठी, दिनेश.** "सांख्य दर्शन में सृष्टि: एक समीक्षात्मक अध्ययन" पीएच.डी. शोधप्रबंध, वी.बी.एस. पूर्वांचल विश्वविद्यालय, 2015।
8. **"भारतीय योगदर्शन में कैवल्य-स्वरुप: एक विवेचन"** *ऑल स्टडीज़ जर्नल,* 2016।
9. **"सांख्य दर्शन में पुरुष और प्रकृति चिंतन धारणा"** *अनंता जर्नल,* 2016।
10. **"सांख्य दर्शन में विकासवाद"** *आर.आर जर्नल्स (आर.आर.आई.जे.एम.),* 2020।
11. **भारतकोश संपादक मण्डल** "गौड़पाद भाष्य (सांख्यकारिका पर)" *भारतकोश—ज्ञान का हिन्दी महासागर।*
12. **भारतकोश संपादक मण्डल** "युक्तिदीपिका (सांख्यकारिका टीका)." *भारतकोश—ज्ञान का हिन्दी महासागर।*

•